चतुर्थ अध्याय

'मौत का नगर' के पात्रों का पारिवारिक तथा आर्थिक संघर्ष

स्वातंत्र्योत्तर भारत एक नवीन परिवर्तित रूप में हमारे सामने आता है जहाँ एक ओर परंपरा से चले आ रहे संयुक्त परिवारों का विघटन हो रहा है तो दूसरी ओर सामाजिक परिवारिक संबंधों के परंपराबध्द रूप में परिवर्तन हो रहा था। यहाँ तक कि पिता-पुत्र, माँ-बेटी, पति-पत्नी या भाई-बहन जैसे निकटतम संबंधों में भी जैसे एक अजनबीपन आ रहा है जो इंसान को एक दूसरे के पास रहते हुए भी एक दूसरे से बहुत दूर कर देता है। हिंदी कहानी की यही सार्थकता है कि वह अपने समय के बाह्य तथा आंतरिक, सामाजिक तथा मानसिक संघर्ष की अभिव्यक्ति करती है।

आज की कुछ कहानियाँ ऐसी भी हैं जिनमें चित्रित संघर्ष परिवेश की भिन्नता अथवा बदलती हुई परिस्थितियों के कारण उत्पन्न हुआ है। जब व्यक्ति एक परिवेश को छोड़कर दूसरे परिवेश में प्रवेश करता है तब उसके जीवन-मूल्यों में कहीं न कहीं टकराहट अवश्य होती है। परिणाम स्वरूप या तो व्यक्ति को उस परिवेश का अंग बनने के लिए स्वयं को परिस्थितियों के अनुरूप ढालना पड़ता है और फिर संघर्ष से छुटकारा पाने के लिए उसे विवश होना पड़ता है। आज की हिंदी कहानी इन्हीं परिवर्तित मूल्यों से उत्पन्न संघर्ष की कहानी है। यही कहानीकार ने दर्शाया है।

4.1 पारिवारिक संघर्ष

4.1.1 माँ-बेटी में संघर्ष

आज के जमाने में प्रेम को लेकर परिवारों में संघर्ष बढ़ता है। आज की नई पीढ़ी सिर्फ अपने बारे में ही सोचती है। परिवारवालों की कोई भी बात मानने को आज के युवा तैयार नहीं हैं और इसी बात से लेकर परिवार के लोगों में तुफान मच जाता है। इसी का वर्णन अमरकांत ने 'असमर्थ हिलता हाथ' इस कहानी में किया है।

'असमर्थ हिलता हाथ' कहानी में माँ की प्रतिमा पुरानी पीढ़ी के रूप में चित्रित हुयी है। इस कहानी की माँ-लक्ष्मी टूटते परिवारों की करूणा अपने में समेटे हुए है। कहानी की मीना दिलीप से प्रेम करती है।

दिलीप मीना के भाई से कह देता है कि वह मीना से शादी करना चाहता है पर भाई को यह स्थिति स्वीकार नहीं है। जब माँ को मीना के प्रेम का पता चलता है तो माँ एक तिखी घुटन अनुभव करती है तथा कहती है "हे भगवान ! इसने हमारी इज्जत चौराहे पर फोड़ दी। मैंने पैदा होते ही इसका गला क्यों नहीं घोट दिया।"[1] वह मीना को मारती-पीटती है और कमरे में बंद करती है।

इस युग में स्त्री पर इस किस्म की पाबंदी नहीं लगाई जा सकती है। एक दिन दिलीप का एक पत्र पकड़ लिया जाता है। घर में तूफान मच जाता है। इसीवजह से माँ दीवार पर सिर टकराते हुए अपनी जान देने को तैयार हो जाती है। इसीतरह दिन बीतने लगें। एक और उसकी माँ है, जिसने चारों और एक लकीर खींच दी है। दूसरी ओर उसका प्यार है, जो उस लकीर को अस्वीकार करता है। अब उसको विश्वास हो गया है कि प्यार लकीर से बड़ा होता है। वह दिलीप को छोड़ नहीं सकती थी।

"इसी बात की वजह से माँ बीमार पड़ती है और न चाहते हुए भी मीना उसकी सेवा करती है। अतः माँ के बीमार पड़ते ही उसके मन में यह विचार आता कि माँ की मृत्यु के बाद वह चिड़िया की तरह आझाद हो जायेगी। सेवा के बीच वह दिलीप के साथ अपने प्रेमसंबंध को याद करती है। लेकिन घर का प्रत्येक व्यक्ति इस प्रेम संबंध को नापसंद करता है। बाद में वही संघर्ष अंतिम मोड़ ले लेता है। माँ की अवस्था अत्यंत बिकट हो जाती है। मरते समय वह मीना से कुछ कहना चाहती है कि न चाहते हुए भी मीना अपनी मनपसंद लड़के से विवाह कर ले। लेकिन कह नहीं पा रही है। उसकी मन की इच्छा मन में ही दबी रहती है उसके असमर्थ हाथ हिल रहे है और ओठ बोल नहीं रहे हैं और यही पर मीना का प्यार ऐसी विड़ंबना बन जाता है कि मरणासन्न अवस्था में माँ की इच्छा मुखर नहीं हो पा रही थी।"[2]

इस मनोवैज्ञानिक सत्य को अमरकांत ने बहुत सहज भाव से पूरी सादगी से उभारा है।

4.1.2 अस्तित्व के प्रति संघर्ष

आज ऐसे अनेक लोग हैं जो दुःखी तथा पीड़ित हैं। उन्हें कुछ भी काम करने में संकोच नहीं आता है। निम्नवर्गीय लोग अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए कुछ भी करने को तैयार हो जाते हैं। ऐसा ही

एक बयान 'जिंदगी और जोंक' इस कहानी में अमरकांत ने 'रजुआ' इस पात्र के माध्यम से चित्रित किया है। 'जिंदगी और जोंक' इस कहानी में रजुआ के जीवन को लेकर जिजीविषा का चित्रण किया है। वह अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए दूसरों के घरों में काम करता है। रजुआ हर बार लोगों से मार खाता है। गृहस्थी स्थापित करने की उसकी कोशिश तथा बीमारी से घिरकर बच निकल ने की उसकी हिम्मत है।

रजुआ अस्तित्व के लिए संघर्षशीलता का प्रत्यक्ष उदाहरण है। रजुआ स्वतंत्र जिजीविषा की साक्षात प्रतिमा है। तथा उसमें क्षमता बोध इतना प्रबल है कि विषमतम परिस्थितियों में भी वह मुहल्ले में टिका रहता है। जब वह बीमार हो जाता है तब वह जीना चाहता है किंतु परिस्थितियों की मार रजुआ को उसके अस्तित्व संघर्ष से विमुख न कर पाती है। उसमें तीव्र जीवनेच्छा है तथा वह एक-एक क्षण अपने लिए जी रहा है। जिंदगी से जोंक की तरह चिपका हुआ है। "उसके मुख पर मौत की भीषण छाया नाच रही थी और वह जिंदगी से जोंक की तरह चिपका हुआ था। लेकिन जोंक वह था या जिंदगी ? वह जिंदगी का खून चूस रहा था या जिंदगी उसका।"[3] इस प्रकार रजुआ बूरी तरह मरता है। लोग उसके प्रति संवेदना रखते हैं। सहानुभूति दिखाते हैं पर उसे उठाकर किसी अस्पताल में नहीं पहुँचातें। शहरी जीवन में मानव मूल्यों का महत्त्व नहीं है और व्यक्ति के पास अनुभूति एवं संवेदना के अतिरिक्त कुछ नहीं है।

रजुआ के माध्यम से लेखक ने जीवन जीने की लालसा तथा एक भीखमंगे की गाथा को, उसके बदलते उपेक्षित व्यक्तित्व को उजागर करने का प्रयास इस कहानी में किया है। 'जिंदगी और जोंक' का रजुआ प्रेमचंद की 'कफन' कहानी के घीसू और माधव का सजातीय पात्र है। जिंदगी इसको चूस रही है और वह जिंदगी को चूस रहा है। निम्नवर्गीय लोगों की समस्या तथा उसकी पूर्ति के लिए उठाये गये संघर्ष इसी का यथार्थ चित्रण रजुआ के माध्यम से इस कहानी में किया है।

4.1.3 मध्यवर्गीय अभावग्रस्तता का भयावह रूप

आज हमारे देश में कितने ही ऐसे परिवार हैं जो भूख के मारे तड़पते हैं। उनको एक वक्त का भोजन भी नसीब नहीं होता। ऐसे कितने परिवार सुशिक्षीत होकर भी गरीब तथा बेरोजगार हैं। आर्थिक विषमता के

कारण उनका जीवन ही संघर्षमय हो गया है। ऐसा ही चित्रण अमरकांत ने 'दोपहर का भोजन' इस कहानी में किया है।

अमरकांत की 'दोपहर का भोजन' कहानी मध्यवर्ग की अभावग्रस्तता का भयावह रूप है। कहानी के केंद्र में मुन्शी चंडिकाप्रसाद की पत्नी सिद्धेश्वरी घर की आधार स्तंभ है। उनके तीन बेटे हैं। रामचंद्र, मोहन और प्रमोद। दोपहर का समय है। सिध्देश्वरी भोजन बनाकर बरामदे में बैठ गयी है। तो उसकी दृष्टि एकाएक छोटे बेटे प्रमोद पर पड़ती है, प्रमोद बीमार और कृशकाय हो गया है। मक्खियाँ अधिक होने के कारण सिद्धेश्वरी ने अपना फटा गंदा ब्लाऊज प्रमोद के मुँह पर डाल दिया है।

दोपहर के बारह बजे हैं। सिद्धेश्वरी अपने पति तथा बेटों की राह देख रही है तभी उसकी नजर बड़ा बेटा रामचंद्र की तरफ जाती है, वह घर की तरफ आ रहा है। उसकी उम्र इक्कीस वर्ष की है और वह इंटर पास है। वह एक स्थानीय दैनिक समाचार पत्र के दफ्तर में प्रफू-रीडरी का काम सीख रहा है। जब वह खाने के लिए बैठ जाता है तब खाते-खाते पूछता है, ''मोहन कहाँ है ?' माँ को मालूम नहीं है मोहन कहाँ है ? पर कहती है, कि किसी लड़के के यहाँ पढ़ने गया है। उसका दिमाग बड़ा तेज है। फिर थोड़ी देर बाद प्रमोद के बारे में पूछता है, ''तो माँ सत्यांश छिपाते हुए कहती है कि वह ठीक है और रोया भी नहीं है।''[4] माँ ने उसे और रोटी परोसना चाहा, लेकिन उसने कहा बस इच्छा नहीं है।

बाद में मँझला लड़का मोहन खाना खाने बैठ जाता है। माँ उसे खाना परोसते हुए कहती है, ''बड़का (रामचंद्र) तुम्हारी बहुत तारीफ कर रहा था। कह रहा था, मोहन बड़ा दिमागी होगा, उसकी तबीयत चौबीस घंटे पढ़ने में ही लगी रहती है।''[5] माँ उसे अपनी ही बातें दोहराती है। इतने में मुन्शी चंडिकाप्रसाद राम का नाम लेते हुए आते हैं और खाना खाने बैठ जाते हैं। उनकी उम्र पैंतालीस वर्ष की है, पर वे पचास-पचपन के लगते हैं। वे खाना खाते-खाते रामचंद्र की पूछताछ करते हैं। तब सिद्धेश्वरी कहती है कि वह, ''अभी-अभी खाकर गया है कह रहा था, कुछ दिनों में नौकरी मिल जायेगी। हमेशा 'बाबूजी बाबूजी' किए रहता है।''[6] इस प्रकार दोनों का एक-दूसरे का मन बहलाने वाला वार्तालाप चलता रहता है।

बाद में सिद्धेश्वरी पति की जूठी थाली लेकर खाना खाने बैठ जाती है। उसके लिए बहुत थोड़ा अन्न बचता है। वह ग्रास मुँह में डालती है, तो उसकी आँखों से आँसू टपकने लगते है।

सिद्धेश्वरी एक गृहिणी, समझदार पत्नी है। वह स्वयं भूखी रहकर परिवार के सदस्यों का पूरा-पूरा खयाल रखती है। वह यह जानती है कि रोटी थोड़ी बनी है, जिससे किसीका भी पेट पूर्णतया भरनेवाला नहीं है। घर में शांति बनी रहे, इस दृष्टि से वह झूठ बोल कर भी अपने पति तथा बच्चों को खुश रखती है।

"सारा घर मक्खियों से भनभन कर रहा है। आँगन में गंदे कपड़ें लटक रहे हैं। दो बेटों का पता नहीं है। बाहर की कोठरी में मुन्शीजी निश्चिंत होकर सो रहे हैं।"[7] कहानी में मुख्यरूप से मध्यवर्गीय परिवार को लिया गया है। कहानी का परिवार गरीब तथा पुरुष सदस्य बेरोजगार हैं। उनको दोपहर का भोजन भी पूरीतरह से नहीं मिलता। कहानी का प्रारंभ और अंत दोपहर के भोजन से हो जाता है। कहानी की मुख्य संवेदना गरीबी है। एक परिवार के पाँच सदस्यों में ही कहानी चलती रहती है। समाज की कमजोरियों का चित्रण करते हुए लेखक ने वर्तमान समाज की यथार्थ स्थिति को प्रस्तुत किया है। अतः उनका जीवन संघर्षमय हो गया है।

4.1.4 दांपत्य जीवन में संघर्ष

पत्नी-पति की जीवनसाथी होती है। साथ में वह सुख-दुख बाँटनेवाली और जीवन में प्रेरणा देनेवाली भी होती है। जीवन के कठिन प्रसंगों में अकेले न रहकर पति का साथ देती है। पति की मान-मर्यादाओं का पालन करती है। ऐसी पत्नी आदर्श पत्नी होती है। लेकिन इस समाज में ऐसी भी स्त्रियाँ है जो पति को धोखा देती हैं। इसलिए उनके जीवन में सिर्फ दरारे पड़ती है। ऐसा ही चित्रण अमरकांत ने 'विजेता' इस कहानी में किया है।

'विजेता' एक सशक्त कहानी है। जिसमें मानव मन की जटिलता की सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। इस कहानी का नीतियुक्त आचरण इससे भी ज्यादा गूढ़ और प्रभावशाली है। इस कहानी में 'मैं' यह पात्र रामायण का दोस्त है। इसकी वजह से रामायण कभी-कभी 'मैं' के यहाँ चला जाता है। वह उसके घर

जाकर उसकी बहनों के साथ भी अपनी लंपटता जाहीर करने से बाज नहीं आता है। 'मैं' पात्र अपने साथी रामायण के दंभी और लंपट व्यवहार से क्षुब्ध होकर उससे बदला लेना चाहता है। अब 'मैं' अर्थात रामायण का दोस्त बहाने बनाकर उसकी अनुपस्थिति में उसकी पत्नी-नीलम से मिलना शुरू करता है, "दुनिया में आपको छोड़कर अब मेरा कोई नहीं। वह अक्सर फुसफुसायी आवाज में कहती है। नीलम प्यार में पागल हो रही थी। वह मेरे एक इशारे पर अपना प्राण दे सकती थी। मैं परवाह नहीं करती। आपको पाकर मुझे किसी चीज का गम नहीं। अब मुझे मरना ही पड़े तो मैं हँसते-हँसते जान दे सकती हूँ।"[8]

'मैं' पात्र चाहता है कि रामायण इस संबंध के बारे में जाने तभी तो उसको तकलीफ होगी और 'मैं' को लगेगा कि उसने उसे आहत करके अपना बदला चुका लिया। एक दिन रामायण को इस बात का पता चलता है। वह रामायण अपनी पत्नी को इतना पीटता है कि वह मर जाती है। उस दरम्यान उनके वैवाहिक जीवन में एक तुफान मच जाता है। रामायण को गिरफ्तार कर लिया जाता है। 'मैं' अपना बदला लेने के लिए रामायण के साथ संघर्ष करता है। लेकिन इस संघर्ष में रामायण और उसकी पत्नी में दरार पड़ती है। इस संघर्ष का परिणाम यह हुआ कि उस मित्र ने मित्राघात तो किया लेकिन उसकी पत्नी को अपनी वासना का शिकार बनाकर उसकी गृहस्थी उजाड़ दी।

4.1.5 **मकान के लिए संघर्ष**

"भारतीय समाज में मकान का अस्तित्व बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि मकान परिवार के लोगों को इकठ्ठा रखता है। सर्दी-गरमी, आँधी-तूफान, ओला-पत्थर से रक्षा करता है। वह छाया देता है जिसके नीचे आदमी सुख के साथ सो सकता है। मकान में रहकर हमें गर्व होता है कि हमारा भी कोई अस्तित्व है। ऐसे ही हँसते हुए मकान में आदमी रहना पसंद करता है। लेकिन जिनके पास रहने के लिए मकान नहीं होते हैं ऐसे निम्नमध्यवर्ग परिवार को काफी संघर्ष झेलने पड़ते हैं। किराये के मकान में तकलीफ ही तकलीफ हो, उसमें हर काम उलटा ही हो ऐसा ही चित्रण अमरकांत ने 'मकान' इस कहानी में किया है।"[9]

मनोहर तथा उसकी पत्नी शकीला इन दोनों का चित्रण 'मकान' कहानी में किया है। वे एक किराये घर में रहते हैं लेकिन इस घर में संतोष नहीं है। यहाँ आते ही उसकी पत्नी बीमार पड़ती है। उसकी दवा के लिए तथा अपने बच्चों की जिम्मेदारी के लिए वह कर्जा उठाता है। वह अपनी बिवी तथा बच्चों से असीम प्यार करता है। इनके लिए वह यह घर छोड़ना चाहता है और दूसरा मकान किराये पर लेना चाहता है। लेकिन वह पहले से ही कर्ज से लदा हुआ है और अपने बजेट के अनुसार उसे एक भी मकान नहीं मिलता। वह आखिर में ज्योतिषी के पास जाता है और ज्योतिष उसे कहता है, "कि तुम्हारे कमरे के नीचे एक कपारचिखा प्रेत है। किसी ने धन की लालच में उसे दफना दिया था। तुम्हारी किस्मत में धन तो बहुत है, पर यह प्रेत हर चीज को खाता है वह कुछ नहीं होने देता है। जब तक तुम उस मकान में हो तुम मजे में नहीं रह सकते। तुम्हारी जान को भी खतरा है। इसलिए तुम वह मकान छोड़ दो।"[10] ज्योतिष की भविष्यवाणी उनकी गृहस्थी में संकट ही पैदा करती है।

मनोहर ने काफी मकान देखें पर वे बड़े ही महगें थें। फिर वह एक बाबूजी के पास आता है वह सारी बात उसे बताता है। लेकिन बाबूजी उसे समझाते हैं आजकल के जमाने में ज्योतिषी पर विश्वास करना ठीक नहीं है। मनोहर वहाँ से उठकर लड़खड़ाते कदमों से निकल जाता है। मजबूत एवं हीनसा व्यक्ति बन जाता है। अपनी बीवी तथा बच्चों के लिए अपने परिवार के लिए प्रारंभ से लेकर अंत तक मकान के लिए संघर्ष करता है। आखिर तक उसका जीवन संघर्षमय बना रहता है।

4.1.6 बेटी की शादी के लिए संघर्ष

अमरकांत की 'लड़की की शादी' कहानी में लड़की का पिता नेतानुमा, बुध्दिजीवी तथा बेहद चालाक है। साधारण कार्यकर्ता के रूप में जनसभा में भाषण देता है तथा साहित्यिक गोष्ठियों में लड़की का पिता जोशीली कविताएँ सुनाता है। उसकी इकलौती संतान है, जो लाड़-प्यार के कारण कोई राऊर न सीख सकी, वह बदसुरत काली थुलथुल शरीरवाली, स्वभाव से घंमडी और क्रोधी है। कहानी का 'मैं' याने बेटी का बाप अपनी बेटी के लिए अच्छा सा लड़का फँसाना चाहता है। वह कई जगह प्रयत्न करता है पर उसे

सफलता तब मिलती है जब उसके हाथ कृष्ण मोहन नामक युवक आता है। कृष्णनाथ ने उसे नौकरी दिलायी थी। 'मैं' कृष्ण मोहन से बेटी के बाबत झूठ बोलता है उसे उँची नौकरी दिलाने का लालच देता है और अंत में कृष्ण मोहन को फँसाने में सफल हो जाता है। इतना ही नहीं वह अपनी बेटी के लिए किसी से भी संघर्ष कर सकता है। यहाँ 'मैं' के रूप में लेखक ने एक ऐसे बुद्धिजीवी की प्रतिभा खड़ी की है जो जीवन में व्यावहारिक दृष्टि से सफलता पाने के लिए किसी का भी विरोध सहन कर सकता है यह एक मध्यवर्गीय पिता की कहानी है जो अपनी बेटी की शादी की चिंता में डूबा है।

4.1.7 कर्तव्यनिष्ठा

'डिप्टी कलक्टरी' एक ऐसी कहानी है जिसमें बदलते मानव मूल्य तथा नैतिक मूल्यों की चर्चा है। इस कहानी का मध्यवर्गीय पिता शकलदीप बाबू अपना जीवन स्तर उठाने के लिए तथा समाज में अपना स्थान प्रमाणित करने के लिए अपने बेटे से उम्मीद रखता है कि वह डिप्टी कलक्टर बने। शकलदीप बाबू का बड़ा बेटा नारायण घर में बबुआ के नाम से जाना जाता है। पिछले तीन चार साल से बहुत सी परिक्षाओं में बैठने एम. एल. ए. लोगों के दरवाजे के चक्कर काटने तथा और भी उल्टे-सीधे फन इस्तेमाल करने के बावजूद भी उसको अब तक कोई नौकरी नहीं मिली है। दो बार डिप्टी कलक्टरी के इम्तहान में भी वह बैठा था पर पास नहीं हुआ। अब एक अवसर उसे और मिल रहा है जिसे वह छोड़ना नहीं चाहता है। लेकिन उनके परिवार की परिस्थिति अत्यंत खराब थी। शकलदीप बाबू यह मुख्तार थे। लेकिन बुढ़ापे के कारण उनकी आवाज में न वह तड़प रह गयी न शरीर में वह ताकत और न चाल में वह अकड़। फिर भी उनकी इच्छा थी कि अपना बेटा डिप्टी कलक्टर बन जाये। इसलिए वे अपने बेटे की पढ़ाई के लिए छः सौ रुपए कर्ज उठाते है और आस लगाये बैठते है कि बबुआ पास हो जायेगा तो उनके सभी कष्ट दूर हो जायेंगे। आर्थिक विषमताओं से ग्रस्त अत्यंत सामान्य स्थिति होने के बावजूद पिता अपने बेटे की पढ़ाई पूरी करते है। अपनी पत्नी से कहते हैं, "पचास रुपये तो बचे हैं न उसमें से खर्च करो। अन्न-जल का शरीर लड़के को ठीक से खाने पीने को न मिलेगा तो वह इम्तहान क्या देगा। रुपये की चिंता मत करो मैं अभी जिन्दा हूँ।"[11]

इस प्रकार माँ-बाप उसे किसी चीज की कमी नहीं होने देतें।

डिप्टी कलक्टरी का इम्तहान इलाहाबाद में होनेवाला था और वहाँ जाने का समय नजदीक आ गया। इस बीच नारायण खूब परिश्रम करता है। अठ्ठारह-उन्नीस घटों तक पढ़ता है। माँ-बाप भी उसकी पढ़ाई में कोई बाधा उपस्थित नहीं होने देतें। जब नारायण इम्तहान के लिए इलाहाबाद जाने के लिए तैयार होता है तब शकलदीप बाबू शिवजी के मंदिर जाते हैं और उसके लिए भगवान का प्रशाद भी लाते हैं।

नारायण बाबू इम्तहान में पास नहीं हुये। उनका नाम सूची में नीचे रह जाता है। अब नारायण बाबू कभी डिप्टी कलक्टर नहीं होंगे। शकलदीप बाबू का स्वप्न भंग हो जाता है। उन्होंने आज तक अपना जीवन बड़ी कठिनाइयों से बिताया था। काफी संघर्ष से रुपये जुटा लिये थें ताकि एक बार नारायण बाबू डिप्टी कलक्टर बन जाये तो उनके दिन सुधर जायेंगे और अपना जीवऩ सुख से बिता लेंगे। पर ऐसा कुछ नहीं होता है बल्कि नारायण बाबू को पढ़ाई के लिए जो कर्जा लिया वह भी चुकता करना है। अपने कर्तव्यनिष्ठता का पालन करते समय उन्हें काफी संघर्ष करना पड़ता है।

4.1.8 **मध्यवर्गियों का सपना**

मध्यवर्गीय परिवार के लोग आर्थिक रूप से ग्रस्त होते हैं। वे अपने परिवार के लोगों के लिए कुछ भी करने को तैयार होते हैं। लेकिन कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उनको बड़ी कठिनाई से जीवन गुजारना पड़ता है। वे अपनी इच्छा ख्वाब के माध्यम से अपने परिवार वालों को आनंद देते हैं। ऐसा ही उदाहरण 'सप्ताहान्त' इस कहानी में है। इस कहानी का नायक रामसंजीवन है। रामसंजीवन छोटे से घर में रहता हैं। उस घर में एक ही छोटा कमरा है। उस कमरे में ट्रँक, बिस्तर, मेज, कुसियाँ, किताबें-कापियाँ, छाता, छड़ी, कपड़ें आदि सब कुछ रखा हुआ है। एक दिन रामसंजीवन ने लाटरी का तिकट खरिदा। कुछ दिनों के बाद एक व्यक्ति आँधी की तरह उसकी तरफ दौड़ता हुआ आता है, वह आदमी सड़क पर का पानवाला था और उसने बताया कि "आपको लाटरी का पहला इनाम मिल गया है। आज शाम को तो खुला है, बधाई है भैया जी, हाँ भैयाजी रेडिओ से नंबर बोला है। सब भगवान की दया है।"[12] रामसंजीवन अंदर आकर पागल की तरह

चिल्लाने लगता है, ''दो लाख-दो लाख।'' सारे मोहल्ले में यह खबर बिजली की तरह फैल गयी। घर में बधाई देने के लिए लोगों का तांता लगा। लोगो ने बताया कि स्वयं जिलाधीश यहाँ आकर उसको बधाई देंगे। रामसंजीवन के मन में हलचल मच गयी, उसकी पत्नी की कहने लगी कि पास पड़ोस वालों को दावत दूँगी, बेटी ने भी कहा कि हम अब इस घर में नहीं रहेगें। रामसंजीवन बहुत गंभीरता से अपनी योजना बनाता है पहले उसने मकान बनवाने की सोची फिर लड़कियों की शादी और एक-एक लड़की पर बीस हजार रुपये खर्च किये जायेंगे। इसके बाद जो शेष रुपयें बचते हैं उन्हें बैंक में जमा किये जायेगें। लाटरी क्या मिल गयी सभी अपनी इच्छा को प्रगट करने लगें।

जिलाधीश सुबह आने वाले थें इसलिए उनकी खातिर के लिए पड़ोस से दो कुसियाँ मँगवायी गयीं। घर में जोरदार साफसफाई होने लगी। रसोईघर से खुशबू चारों और फैलने लगी। लेकिन हुआ यह कि जिलाधीश के आने के पहले ही अखबार आ गया जिसमें लाटरी के प्रथम पाँच विजेताओं के नंबर निकाले हुये थें। लेकिन उस अखबार में रामसंजीवन का टिकट नंबर कहीं भी नहीं था सभी अखबारों में देखा जाता है लेकिन उसमें भी यही हाल था। देखते-ही-देखते सबके चेहरे काले पड़ जाते है। दरवाजे बंद हो जाते है। बड़ी लड़की ने मुँह बिचका कर कहा, ''धोखा इस घर ने हमेशा धोखा दिया है।''[13] घर के सभी लोग छूप जाते है। फिर रामसंजीवन उपयुक्त अवसर देखकर पीछे का दरवाजा खोलकर चुपके से बाहर निकल जाते हैं। चलते-चलते एक पार्क में वह आ जाते है वहाँ एक बरगद के पेड़ के नीचे बने चबुतरे पर बैठ जाते है। वह सोचते है कि दिन भर वे यहीं रहेगें और अँधेरा होने पर घर जायेगें। चाहे जो हो उनको उसी तरह अपनी जिंदगी काटनी पड़ेगी। उनकी वर्तमान जिंदगी में एक तुफान खड़ा हो गया। यह सब एक ही हफ्ते में ही चल पड़ा यह सब खेल सिर्फ हफ्तों में ही शुरू होता है। उसे लाटरी का तिकट मिलने पर उसके परिवार के लोगों की इच्छा बढ़ जाती है। इच्छा की पूर्ति के लिए वह योजनाएँ बनाता है, लेकिन योजनाएँ सब पानी में मिल जाती हैं। उनका जीवन पहले जैसा था वैसा ही अब हो जाता है। उनका ख्वाब ख्वाब ही बनकर रह जाता है।

4.2 आर्थिक संघर्ष

अमरकांत ने आर्थिक अभाव और पारिवारिक जीवन को अधिकतर कहानियों में चित्रित किया है। अर्थ ही सारे पापों की जड़ है। इसके लिए ही जीवन में संघर्ष होता है। इसीसे जीवन दृष्टि में परिवर्तन आता है। आर्थिक विषमताओं से ग्रस्त तथा सुशिक्षित बेरोजगारों का चित्रण कहानियों में मिलता है। आज की परिस्थितियों में जीवन मूल्यों का आग्र ही मनुष्य पग-पग पर कष्ट उठाता है। आज की समाज व्यवस्था में धन के प्रति लालसा बढ़ी है। परिणाम स्वरुप समाज में तनाव और संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गयी है। परंपरागत सामाजिक आस्थाओं और विश्वासों के खंडन के साथ ही समाज में आर्थिक वैषम्य के प्रति विद्रोह होते हैं। ज्यादातर निम्न तथा मध्यवर्ग के लोगों में संघर्ष दिखायी देता है। अमरकांत ने इसी का चित्रण अपनी कहानियों में किया है।

4.2.1 आर्थिक विवंचनाओं से ग्रस्त

'मूस' कहानी में एक ऐसे पात्र का वर्णन किया है जो दूसरे के ही सहारे जीता है। कहानी का नाम इस पात्र के नाम से जोड़ा गया है। इस पात्र का नाम भी मूस ही है। निम्नवर्गीय परिवार के होने के कारण उनको आर्थिक कठिनाइयाँ और बेरोजगारी का सामना करना पड़ता है। मूस की पत्नी का नाम परबतिया है वह परबतिया के सहारे जीता है। वह आठ-दस घरों में बर्तन माँजने का काम करती है। लेकिन काहिली नागा और गंदी मँजाई के कारण अंत में तीन-चार ही काम हाथ रह जाते हैं मूस भी छः सात घरों में पानी भरने का काम करता है। सर को आगे झुकाकर एक हाथ से काँवर पकड़े और दूसरे हाथ को चीले के डैने की तरह फैलाये जब वह चलता तो लगता कि भारी-भारी गगरों के बोझ से ही वह अचानक छोटा हो गया है। रास्ते में दो-तीन जगह काँवर उतारकर वह कुछ देर के लिए दोनों घुटनों पर हाथों को तानकर बैठ जाता और इधर-उधर देखते रहता। ''मूस का जीवन उस मरियल बैल की तरह था, जो चूपचाप हल में जुतता है, चूपचाप मार सहता है और चूपचाप नींद में भूसा खाता है। उसको देखकर यह कहना मुश्किल था कि उसकी

कोई इच्छा या अनिच्छा भी है। उसके मुख पर कोई भाव नहीं था और वह ऐसी पुरानी मशीन की तरह था, जो वर्षों से काम करते रहने पर भी खराब नहीं होती।''[14] मूस ने कभी भी परबतिया को ऐसी वैसी जबान न कहीं थी। वह क्या करती है और क्या बोलती है इसके संबंध में उसने कभी सोचा भी न था। वह जैसा खाना देती वह सर झुकाकर खा लेता और डाँटती-फटकारती तो चूपचाप सुन लेता। परबतिया अकसर उसको 'दो बित्ते का मर्द' कहकर अपनी उच्चता और प्रभुत्व की पृष्टि करती है।

शहर में तेजी से सड़के पक्की हो गयी तथा बिजली और नल लग गयें। परंतु इस वजह से मूस की काँवर बेकार हो गयी। देखते ही देखते मूस की हालत उस मुर्गी की तरह हो गई जो कमरे में फँसने पर बाहर निकलने का रास्ता नहीं ढूँढ़ पाती। वह सोच भी नहीं सकता था कि कुएँ से पानी भरने के अलावा कोई और भी काम हो सकता है। परंतु आराम करने से कुछ भी नहीं होने वाला था। इधर परबतिया की दमे की बीमारी उभर आयी थी। हारकर मूस ने दूसरे काम पकड़ें। वह कभी सब्जी की मंडी पहुँच जाता और वहाँ से सामान इधर-उधर पहुँचाकर कुछ कमा लेता। कभी वह सेठ लोगों के गोले में मोटियागिरी करने लगता तो किसी दिन काम न मिलने पर फाकेमस्ती करता। मूस दिन-ब-दिन कमजोर होता चला गया और एक दिन बीमार पड़ गया उसके पास अपने इलाज के लिए भी रुपये नहीं थें। इन कमजोरियों का चित्रण अमरकांत ने यथार्थ रूप से किया है। इस कहानी में मुख्यरूप से निम्नवर्गीय परिवार को लिया गया है। कहानी के पात्र गरीब लाचार और बेरोजगार हैं। कहानी का परिवार आर्थिक कठिनाइयों से संघर्ष करता चला आया है और आगे चलकर वर्तमान स्थिति में भी जीवन जीने के लिए उसे संघर्ष करना पड़ेगा।

4.2.2 बेरोजगारी से संघर्ष

आज हमारे देश में कितने ही आत्मीक रूप से पीड़ित लोग मिलेंगे। सुशिक्षित होते हुए भी लोग अपने उदरनिर्वाह के लिए कुछ काम ढुंढ़ते रहते हैं। मन में आये विचारों को पूर्ण करने का प्रयास करते हैं। ऐसे ही मध्यवर्गीय परिवार का चित्रण अमरकांत ने 'गगनविहारी' कहानी में किया है। कहानी के पात्र का

नाम सुंदरलाल है। बी.ए. पास हुये उसे एक साल हो गया परंतु नौकरी नहीं मिली है। फिर उसके मन में विचार आता है कि होमियोपॅथी डाक्टरी पास करके जीवन में आगे बढ़ेगा। इस प्रस्ताव को उसने अपने पिताजी के सामने रखा पिताजी ने न चाहते हुए भी उसे हाँ कर देते है। क्योंकि सुंदरलाल उन सीधे-सादे नवयुवकों में से था जो कठिन काम को आसान समझता हैं। माँ-बाप की अंतिम संतान होने से लड़कपन में उसको खूब लाड-प्यार मिला है। मद्रास के किसी होमियोपॅथी कालेज से योग्यता का सर्टिफिकेट प्राप्त करने में जरा भी कठिनाई नहीं हुई। यह सोचकर कि कल से खूब मेहनत करेगा। परंतु एक ऐसी बात हुई, जिसकी उसने कल्पना तक नहीं की थी। वह अपने कमरे में बैठा था और बाहर बरामदे में एक सज्जन उसके पिताजी से बाते कर रहे थें। "भैया, इस बूरे जमाने में कोई अपनी खेती बारी क्यों छोड़े ? पता नहीं, कैसा समय आये। संकट में पैर रखने के लिए जगह तो होनी चाहिए। अपने छोटे लड़के को मैंने कह दिया है कि, गाँव में ही डटे रहो, शहर में पैर रखने का नाम मत लेना डटकर खेती करता है भाई साहब।"[15] इस बात को सुनकर सुंदरलाल के मन में विचारों की उथलपुथल मचती हैं। उसके हृदय में न मालूम कैसी खुशी की फूलझडी छूटने लगी। जिसके पास खेत-बारी है, उसको दूसरा काम करने की क्या जरूरत ? इस विचार का वह शीघ्र ही कायर हो गया उसे अब होमियोपॅथी बहुत ही फटीचर और अशोभनीय लगने लगी। अब वह गाँव में ही रहकर डटकर खेती करना चाहता है। सुंदरलाल सोचता है कि, "जमाना बड़ा खराब आ गया है कोई ठौर ठिकाना तो चाहिए ही।"

सुंदरलाल अपने ही कल्पना में खो जाता है। अब वह लोगों से कहता हमारे देश में यही तो खराबी है कि लोग पढ़-लिख कर नौकरी के पीछे भागते हैं। आषाढ़ नजदीक आ गया। सुंदरलाल के पिताजी ने एक दिन पूछा कहो बेटा, तुम्हारे गाँव जाने का क्या हुआ ? सोचता हूँ अगले हफ्ते चला जाऊँगा। ऐसे ही अनेक हफ्ते निकल गये लेकिन वह उसीतरह रह गया। कुछ दिन के बाद फिर सुंदरलाल के जीवन में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आ गया। उसकी मुलाकात अपने एक पुराने मित्र गिरिधर से हुयी। दोनों में बातचीत शुरू हो गयी। गिरिधर शीघ्र ही अपने धंदे की तरक्की का इतिहास सुनाता है। किसी की नौकरी

नहीं करना बल्कि दूसरों को नौकर रखना। अब सुंदरलाल आसानी से बेहद उत्तेजीत हो गया अब तक जो सोचा था वह वहीं का वहीं रह गया। अब उसने व्यापार करने की सोच ली और पूरीतरह व्यापार की दुनिया में खोने लगा। लेकिन यह भी उसका ख्वाब ही रह गया।

एक दिन सुंदरलाल जुकाम से बीमार हो जाता है उसके सर में दर्द है और छाती जकड़ गयी है। वह मानसिक द्वंद्व का शिकार हो जाता है। जब भी किसी ने कुछ कह दिया तो उसकी पूर्ति के लिए उसके पीछे भागता रहता है। आखिर तक वह बेकार ही रहता है। उसका जीवन आत्मीक रूप से पीड़ित आदमी की तरह हो जाता है।

इसी प्रकार आज ऐसे कितने परिवार मिलेंगे जिनको एक वक्त का भोजन भी पूरीतरह से नहीं मिलता। ऐसा ही चित्रण अमरकांत ने 'दोपहर का भोजन' इस कहानी में किया है। समाज के मध्यवर्गीय परिवार की आर्थिक कठिनाइयाँ और बेरोजगारी का चित्रण उनमें मिलता है।

'दोपहर का भोजन' अमरकांत की बहुचर्चित कहानी है। यह कहानी मध्यवर्गीय परिवार से जुड़ी है। मुन्शी चंडिकाप्रसाद की पत्नी सिद्धेश्वरी पूरे परिवार की आधारस्तंभ है। उसके तीन बेटे हैं। सिद्धेश्वरी खाना बनाकर बरामदे में अपने बेटों तथा पति की राह देख रही है। उसके बेटे रोजगार की तलाश में फिर रहे हैं। छोटा लड़का प्रमोद बीमार हो गया है और कृशकाय भी। उसे दवाखाने में ले जाने के लिए उनके पास पैसे नहीं है। सिद्धेश्वरी ने जो घर में था उसीसे थोड़ा ही भोजन बनाया है। घर में अस्वच्छता के कारण मक्खियाँ अधिक हो गयी हैं। सिद्धेश्वरी का बड़ा लड़का रामचंद्र ने इंटर पास किया है और वह कामधंदे के लिए इधर-उधर भटकता है। मँझला लड़का मोहन भी हाईस्कूल का प्राईव्हेट इम्तहान दे रहा है। जब दोनों भी दोपहर के समय भोजन के लिए आ जाते हैं तब दोनों को अधपेट ही भोजन मिलता है। इस उम्र में उन्हें ज्यादा भोजन की जरूरत है लेकिन उनको अधपेट ही रहना पड़ता है। पति भोजन के लिए आ जाते हैं, उनको भी अधपेट ही भोजन मिलता है। वास्तव में चंडिकाप्रसाद 45 वर्ष के हैं किंतु शरीर से लगभग 55 वर्ष के दिखाई देते हैं। उनके कपड़ो से गरीबी झलक रही है। मुन्शीजी का खाना होने के बाद उनकी जूठी थाली

लेकर सिद्धेश्वरी खाना खाने बैठ जाती है। उसके लिए एक रोटी-थोड़ी दाल और तरकारी शेष बची है। रोटी का पहला निवाला मुंह में रखते ही न जाने क्यों उसकी आँखों से आँसू बह निकलते हैं।

कहानी के पात्र मध्यवर्गीय, गरीब और बेरोजगार हैं। कहानी का परिवार गरीब है, पुरुष सदस्य बेरोजगार हैं। उनको दोपहर का भोजन भी पूरी तरह से नहीं मिलता। कहानी का आरंभ और अंत दोपहर के भोजन में ही हो जाता है।

4.2.3 मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए संघर्ष

मानव की मूलभूत तीन आवश्यकताएँ होती हैं - रोटी, कपड़ा और मकान। लेकिन इसमें से एक भी जरूरत पूरी न हुयी तो आदमी को काफी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। लेकिन अमरकांत की 'मकान' कहानी में मकान को लेकर संघर्ष बढ़ता है। कहानी में आर्थिक अभाव का चित्रण दिखायी देता है। कहानी में मनोहर तथा उसकी पत्नी शकीला के माध्यम से आर्थिक अभाव का चित्र खींचा है। मनोहर परिवार का सदस्य है। वह किराये के मकान में रहता है। लेकिन जिस मकान में वह रहता है उसमें सिर्फ तकलीफ ही तकलीफ है। उसमें हर काम उलटा होता है। इस घर में आते ही उसकी बिवी शकीला बीमार पड़ती है। उसकी दवा के लिए तथा अपने बच्चों की परवरीश के लिए वह कर्जा लेता है। बाजार में अगर डेढ़ रुपये का एक किलो चावल मिलता है तो वह डेढ़ रुपये का एक सेर लाता है। हर सामान में ऐसा ही होता है। बीवी की हालत बीच-बीच में खराब हो जाती है। मनोहर भाग्य सुधारने की जी तोड़ कोशिश करता है पर असफल रहता है। इस बीच दोस्त बिखर गयें। हर जगह चिठ्ठियाँ लिखना बंद कर दिया। रिश्तेदारों के यहाँ आना जाना बंद हो गया।

लेकिन एक दिन शकीला के मामू का खत आ जाता है, "उन्होंने लिखा कि उनकी तबीयत बड़ी खराब है और वह कुछ दिनों के लिए आना चाहते हैं।"[16] शकीला के मामू के एहसान मनोहर पर थें और मनोहर उसे भूल भी नहीं सकता है। मनोहर की इच्छा थी कि मामू साहब को बुलाऊँ और उनकी दवा इलाज करूं। लेकिन अब मनोहर और कर्जा नहीं लेना चाहता है और कर्जा देनेवाला भी कोई नहीं है। उन्होंने आज

कुछ कहा है तो मनोहर कुछ भी कर नहीं सकता है। वह मुसीबत में पड़ जाता है और इसका हल भी मनोहर निकालता है। न चाहते हुए भी वह मामू को खत भेजता है और लिखता है कि खास बात यह है कि मैं दफ्तर के काम के लिए दिल्ली जा रहा हूँ और शकीला की तबीयत भी ठीक नहीं रहती इसलिए सबको अपने साथ ले जा रहा हूँ। वहाँ दफ्तर की ओर से ठहरने का इंतजाम है। यह बनावटी पत्र मामू को वह भेज देता है। इच्छा न होते हुए भी वह ऐसा बनावटी व्यवहार करता है।

मनोहर ने कई मकान देखे पर वे बड़े ही महंगे थें। वह अपने बजेट के अनुसार किराये वाला घर लेना चाहता है। इसके लिए वह लोगों से पूछताछ करता है। लेकिन उसके बजेट के अनुसार एक भी मकान नहीं मिलता। आखिर तक उसका जीवन संघर्षमय बन जाता है। वह मजबुर एवं हीनसा व्यक्ति बन जाता है। वह उसकी बुनयादी आवश्यकताएँ भी पूरी नहीं कर सकता।

4.2.4 अर्थ की पूर्ति के लिए संघर्ष

'छिपकली' इस कहानी का पात्र रामजीलाल यह एक ऐसा आदमी है जो कुछ भी काम करने के लिए तैयार रहता है। रामजीलाल की उम्र पैंतालीस साल की होगी। साँवले रंग का उसका शरीर मोटा तथा नाटा था और गर्दन का मांस ढीला पड़ गया था। किसी बूढे हाथी की तरह रामजीलाल कहता है, "मैं एक सिनियर रिप्रेजेन्टेटिव था कभी भी किसी भी देश जाना पड़ता था। हमेशा हाथ में पांच सौ हजार रुपये रहते थें। जितना खर्च करो कोई पूछने वाला नहीं था। रामजीलाल हमेशा पँट-कोट-टाय इस पोशाक में रहते थें। भाई और रिश्तेदार इज्जत करते थें। रामजीलाल ने जुआ खेला, शराब पी, रंडी के कोठे पर भी गया। यह करके छोड़ भी दिया। लेकिन ऐसा समय आया कि मित्र और रिश्तेदार की मक्खियों की तरह उड़ गयें और रामजीलाल दाने दाने के लिए मोहताज हो गया।"[17]

कुछ दिन बाद रामजीलाल एक अंग्रेजी फर्म के रोविंग एम्बेसेडर के पद के लिए इण्टरव्यू में जाता है। वह चुन भी लिया जाता है। परंतु जब घर पहुँचता है उधर इंग्लैंड से फर्म के मालिक का केबुलग्राम आता है इप्वाइंट मिस्टर हाऊसफैस। क्योंकि जनरल मॅनेजर ने उसको बुलाकर कहा था मिस्टरलाल एक्सक्युज

मी, आई एम हेल्पलेस। रामजीलाल अब किसी की गुलामी न करके खुद-मुख्तार होना चाहता है। उसने प्रकाशन का काम शुरू किया। उसका दृढ़ मत था कि भारत के लोगों में बिजनेस टैक्ट और बिजनेस मारेल्टी नहीं होती और वह दिखा देना चाहता है कि ऐसी उच्चकोटि की पुस्तकें भी छापी जा सकती हैं जिनसे देश का नैतिक स्तर उन्नत हो जायेगा। उसके पास कुछ थोड़े ही रुपये और कुछ पत्नी के गहने बेचकर तथा शेष मित्रों से उधार लेकर उसने पाँच किताबों के प्रकाशन की योजना बनवायी उम्मीद यही है कि पुस्तक की दो हजार प्रतियाँ एक वर्ष में समाप्त हो जाएँगी और जो पैसे मिलेंगे उनसे आगे का काम बढ़ाया जाएगा। पुस्तक छप गयी परंतु दो हजार रुपये भी विज्ञानबाजी और चार वर्ष में सौ से अधिक ग्राहक पैदा न कर सकी। बाकी रुपये पेट-पूजा में स्वाहा हो गयें।

''रामजीलाल हिम्मत हारने वालो में से नहीं है इसके बाद रामजीलाल ट्रेनिंग स्कूल में साग-सब्जी मक्खन अंडे वगैरह सप्लाई करने लगा। अच्छे से अच्छा माल तांगे पर लदवा कर सीधे स्कूल जाता है। सभी लोग इस काम से खुश हैं। परंतु ईमानदारी का जमाना नहीं रहा है। एक दिन यह ठेका रामजीलाल से छीनकर एक सेठ के लड़के को दे दिया जाता है लेकिन इससे वह हारनेवाला नहीं है। अर्थाजन के लिए वह नई नौकरी की तलाश में इधर उधर भटकता है।''[18]

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है मनुष्य अनिवार्यतः अपने परिवेश से बँधा हुआ है। उसका आतंरिक तथा बाह्य व्यवहार उसके परिवेश से प्रभावित होता है। आज के निम्न मध्यवर्ग और मध्यवर्ग के यथार्थ चित्रण को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। स्वस्थ जीवन दृष्टि, आस्था, संकल्प, संघर्ष, जिजीविषा और यथार्थ के स्वाभाविक चित्रण को आपने अपनी कहानियों में विशेष महत्त्व दिया है। भारतीय परंपरा में संयुक्त परिवार एक आदर्श प्रथा है। सबके सुख-दुःख समान है परंतु आर्थिक संघर्ष ने इन परिवारों को तोड़ दिया है। टूटते परिवारों की प्रक्रिया केवल यहीं तक समाप्त नहीं हुई। पति-पत्नी के बीच बढ़ती हुई दूरी इस काल की कहानियों का महत्त्वपूर्ण विषय रहा है। आज के जीवन की विषमताओं

विसंगतियों एवं असमानताओं के बारीक से बारीक रेशों को अमरकांत ने खोलकर रख दिया है और यह सिद्ध कर दिया है कि मानव जीवन के दुश्मन है और यही उनका विकास नहीं होने देते। आपकी कहानियाँ चलते हुए संघर्ष के व्यावहारिक अर्थ को ही नहीं उद्घाटित करती है, बल्कि वक्तव्य को अस्तित्व की समस्या तक स्थिर कर देती है।

भारतीय समाज की अर्थ विषयक धारणा में काफी मात्रा में परिवर्तन आया है। अर्थ प्राप्ति के लिए हर प्रकार का संघर्ष जायज हो गया है। आज का हर आदमी एक आर्थिक स्पर्धा में जी रहा है। संबंधों के बिखराव और अन्य अमानवीय कार्यकलापों का कारण भी अर्थ ही बना है। पति-पत्नी, भाई-भाई तथा माँ-बेटी में दरार पैदा हो गयी है। माँ का दूध महत्त्वहीन हो गया है, पिता का पितृत्व व्यर्थ हो गया है। अमरकांत की दृष्टि प्रेमचंद की तरह स्पष्ट तथा भाषा की रफ्तार प्रेमचंद की भाषा के ही समान अधिक मंथर, स्थिर तथा गत्यात्मक थी। आपकी कहानियाँ उद्दाम मानवीय जिजीविषा को मूर्त करती हैं और सामान्य जीवन की विराट संवेदनाएँ उभरने में समर्थ हैं।

संदर्भ संकेत

1. मौत का नगर, अमरकांत, ('असमर्थ हिलता हाथ' कहानी से), पृ. 14
2. वही, पृ. 21
3. वही, ('जिंदगी और जोंक' कहानी से), पृ. 214
4. वही, ('दोपहर का भोजन' कहानी से), पृ. 164
5. वही, पृ. 167
6. वही, पृ. 168
7. वही, पृ. 171
8. वही, ('विजेता' कहानी से), पृ. 184
9. कुछ कहानियाँ : कुछ विचार, विश्वनाथ त्रिपाठी, पृ. 19
10. वही, पृ. 20
11. मौत का नगर, अमरकांत ('डिप्टी कलक्टरी' कहानी से), पृ. 56
12. वही, ('सप्ताहान्त' कहानी से), पृ. 276
13. वही, पृ. 280
14. वही, ('मूस' कहानी से), पृ. 35
15. वही, ('गगनविहारी' कहानी से), पृ. 246
16. वही, ('मकान' कहानी से), पृ. 301
17. वही, ('छिपकली' कहानी से), पृ. 230
18. वही, पृ. 232